नईदुनिया

नेता प्रतिपक्ष के तौर पर राहुल गांधी की अग्निपरीक्षा...?

डॉ. विश्वास तिवारी

वर्ष 2024 के आम चुनाव का जनादेश सभी दलों के लिए सीख जैसा है। इस चुनाव में जनता ने कांग्रेस को संभलने का एक और मौका दिया है। 2014 और 2019 में नेता प्रतिपक्ष का पद ही संसद में खाली रहा था, क्योंकि किसी भी विपक्षी दल के पास कुल लोकसभा सीटों की 10 प्रतिशत भी सीटें नहीं थी। केवल नेता प्रतिपक्ष का पद ही नहीं, बल्कि एक तरह से इन दोनों चुनाव ने कांग्रेस के अस्तित्व पर भी सवाल खड़े कर दिए गए थे, लेकिन राजनीति में कब किसकी किस्मत बुलंद हो जाए कहा नहीं जा सकता है। इस बार भाजपा 400 सीटों से ज्यादा पाने के लिए आश्वस्त थी, लेकिन जनता ने उस पर पानी फेर दिया। एनडीए को बहुमत तो दिया, परंतु अकेले भाजपा को नहीं। कांग्रेस इन चुनावों में 99 सीटें लेकर दूसरे नंबर की पार्टी है। इंडिया गठबंधन के नेताओं ने सर्वसम्पत्ति से राहुल गांधी को नेता प्रतिपक्ष बनाने की घोषणा की और लोकसभा अध्यक्ष ओम बिरला ने भी उन्हें नेता प्रतिपक्ष के रूप में मान्यता दे दी है। राहुल गांधी पहली बार कोई संवैधानिक पद संभालेंगे। यह एक बड़ी जिम्मेदारी है जो अपने साथ कई चुनौतियां भी लेकर आएगी। नेता प्रतिपक्ष के रूप में राहुल सीबीआई प्रमुख, मुख्य निर्वाचन आयुक्त, लोकपाल, निर्वाचन आयुक्त की नियुक्ति के अलावा केंद्रीय सूचना आयुक्त और केंद्रीय सर्तकता आयुक्त के चयन समितियों के सदस्य भी होंगे। इन समितियों के अध्यक्ष प्रधानमंत्री होंगे। गांधी परिवार से राजीव गांधी और सोनिया गांधी के बाद राहुल तीसरे नेता प्रतिपक्ष होंगे।

चुनावी राजनीति में राहुल गांधी ने 2004 में प्रवेश किया था। वह कांग्रेस पार्टी के पार्टी प्रमुख भी रहे थे, लेकिन 2019 के लोकसभा चुनाव में मिली हार के बाद उन्होंने पार्टी प्रमुख के पद से भी इस्तीफा दे दिया था। तब से वह कोई भी पद लेने से बचते रहे है, लेकिन अब वह अपनी अनिच्छुक नेता की छवि तोड़ते हुए दिख रहे है। 26 जून को राहुल नेता प्रतिपक्ष के रूप में पहली बार बोले और उन्होंने ओम बिरला को स्पीकर बनने पर बधाई दी। उन्होंने कहा विपक्ष आपको संसद चलाने में सहयोग करेगा, लेकिन अब विपक्ष की आवाज को संसद में दबाया नहीं जा सकेगा। अब विपक्ष भारत के लोगों की आवाज उठाने के लिए हर संभव कोशिश करेगा। यह पहली बार होगा कि इस बार संसद में उनके साथ उनकी मां सोनिया गांधी नहीं होगी, लेकिन उनको भरोसा है कि उनकी बहन प्रियंका गांधी उनकी छोड़ी हुई सीट वायनाड से चुनाव जीतकर संसद में स्थान पा लेंगी। संसद में विपक्ष के नेता की भूमिका काफी अहम और चुनौती भरी होती है। वह संसद में सभी विपक्षी दलों की आवाज बनते है और उनके पास विशेषाधिकार भी होते है। उनकी भूमिका संयुक्त संसदीय समितियों और चयन समितियों में भी होती है। उनका पद एक कैबिनेट मंत्री के रैंक का पद होता है जिसके भत्ते भी उन्हें प्राप्त होते हैं। जिस तरह चुनावी प्रचार में राहुल और प्रधानमंत्री मोदी एक दूसरे पर तीखी बयानबाजी करते रहे हैं, ऐसे में साथ बैठकर फैसले कर पाना उनके लिए बड़ी चुनौती होगी। इस में उन्हें अपनी परिपक्वता दिखानी होगी। संसद में बहसों में भी किसी भी मुद्दे पर अपना होमवर्क करके आना होगा, क्योंकि उसके बिना वह प्रधानमंत्री को घेर नहीं पाएंगे। नरेंद्र मोदी एक बहुत अच्छे वक्ता है और अपनी पूरी तैयारी से किसी भी प्रश्न का जवाब देते है। उनका अनुभव राहुल से कई गुना ज्यादा और उनकी वैश्विक छवि एक ताकतवर नेता की है।

संसद में विपक्ष के नेता की भूमिका काफी अहम और चुनौती भरी होती है। वह संसद में सभी विपक्षी दलों की आवाज बनते है और उनके पास विशेषाधिकार भी होते है। उनकी भूमिका संयुक्त संसदीय समितियों और चयन समितियों में भी होती है। उनका पद एक कैबिनेट मंत्री के रैंक का पद होता है जिसके भत्ते भी उन्हें प्राप्त होते हैं। जिस तरह चुनावी प्रचार में राहुल और प्रधानमंत्री मोदी एक दूसरे पर तीखी बयानबाजी करते रहे हैं, ऐसे में साथ बैठकर फैसले कर पाना उनके लिए बड़ी चुनौती होगी। इस में उन्हें अपनी परिपक्वता दिखानी होगी।

राहुल गांधी के लिए अब तक का यह सफर आसान नहीं रहा और न ही 2024 का चुनाव। राहुल गांधी की लोकसभा सदस्यता से अयोग्यता, उनके गठबंधन के सहयोगी अरविन्द केजरीवाल और हेमन्त सोरेन का जेल जाना, करीब 150 सांसदों का निलंबन, शरद पवार की पार्टी राकंपा और शिवसेना में टूट, नीतीश कुमार का एन चुनाव से पहले पलटी मारना, ममता बेनर्जी का बंगाल में अकेले चुनाव लड़ना और पंजाब में केजरीवाल के साथ सीटों पर समझौता नहीं होना जैसी चुनौतियां का सामना करने के बावजूद लोकसभा चुनावों में 99 सीटें, लाना उनकी एक उपलब्धि है। राहुल गांधी के लिए भाजपा नेताओं ने 'पप्पू' 'शहजादा' 'मूर्खों का सरदार' जैसे शब्दों का प्रयोग किया और उन पर तीखें हमले किए। इतनी जिल्लत और बेइज्जती के बावजूद भी वह न सिर्फ डटे रहे, बल्कि उन्होंने कांग्रेस को पिछली बार से लगभग दो गुनी सीटें भी दिलवाई। कांग्रेस की इस बेहतर प्रदर्शन के लिए उनकी देशव्यापी दोनों यात्राओं का बड़ा योगदान रहा। उन्होंने अपनी 'पप्पू' वाली छवि को तोड़ा और लोग भी उन्हें गंभीरता से भी लेने लगे है। अपनी यात्राओं के दौरान उन्होंने महंगाई, बेरोजगारी और किसानों की समस्या का लगातार उल्लेख किया। उनकी इस यात्रा से कांग्रेस के कार्यकर्ताओं में जोश आया और उन्हें भाजपा के विरूद्ध मजबूती से लड़ने के लिए तैयार भी किया।

2024 के लोकसभा चुनावों में अपने प्रदर्शन से कांग्रेस ने अपना खोया हुआ आत्मविश्वास फिर से पा लिया है। राहुल को यह समझना होगा कि विपक्ष अपनी ताकत से नहीं, बल्कि सरकार की कुछ गलतियों की वजह से भाजपा को नुकसान हुआ है। भाजपा का वोट प्रतिशत में कमी नहीं आई है। कांग्रेस को अपने इस प्रदर्शन का मूल्यांकन करना होगा कि वह क्षेत्रीय दलों से समझौता करने के कारण (यूपी, महाराष्ट्र, केरल, तमिलनाडु) इतनी सीटें जीत पाई है। अगर उत्तरप्रदेश में भाजपा के साथ भितरघात नहीं हुआ होता तो कांग्रेस इस स्थिति में नहीं होती। अब राहुल को सभी क्षेत्रीय दलों को साथ लेकर चलना होगा और उनसे किए गए समझौते को निभाना होगा। कांग्रेस आजादी की लड़ाई के समय से ही एक कमजोर संगठन रहा है, जिसे केवल नेताओं के चेहरों ने बांध के रखा है, चाहे वो पंडित जवाहर लाल नेहरू हो, इंदिरा गांधी हो, राजीव गांधी हो या अब राहुल गांधी हो। कांग्रेस आज तक अपने संगठन को मजबूत नहीं कर पाई है। कांग्रेस जब सत्ता में थी तब भी वो अपने संगठन का ध्यान नहीं रखा पाई। यह पार्टी केवल एक चेहरे या एक परिवार के भरोसे लड़ाई लड़ती है। पिछले 10 साल से विपक्ष में रहने के बावजूद उन्होंने सड़क पर उतरकर कोई बड़ा जन आंदोलन नहीं किया है। इन सालों में उसे सरकार को घेरने के कई मौके मिले जैसे नोटबंदी, जल्दबाजी में लागू किया गया जीएसटी हो जिससे व्यापारियों को बड़ा नुकसान हुआ, बढ़ती महंगाई और बेरोजगारी हो या पेट्रोल डीजल की कीमतें हो, मणिपुर हिंसा हो या कृषि कानून हो। कांग्रेस ने केवल भूमि अधिग्रहण कानून के मामले में एक आंदोलन किया था जिसे सरकार को वापस भी लेना पड़ा था। कांग्रेस सरकार के खिलाफ बड़ा आंदोलन इसलिए नहीं कर पाती है, क्योंकि उसके पास कोई मजबूत संगठन नहीं है, जैसा कि आरएसएस के रूप में भाजपा के पास है।

इस समय पेपर लीक मामला एक बड़ा मुद्दा है। इस मुद्दे पर उन्हें छात्रों के साथ सड़क पर उतरकर आंदोलन करना चाहिए। ऐसा करने से वो एक बड़े वर्ग युवा मतदाताओं का विश्वास जीत सकते है।

राहुल को सबसे पहले अपने संगठन को मजबूत करने के लिए मेहनत करनी होगी। इसी वर्ष जम्मू कश्मीर, झारखंड, हरियाणा और महाराष्ट्र में विधानसभा चुनाव होने वाले है। इसमें वह सिर्फ हरियाणा में ही अपने दम पर चुनाव लड़ेगी, बाकि राज्यों में वह अपनी सहयोगी पार्टी के साथ चुनाव में उतरेगी। कांग्रेस को उत्तर भारत में अपना वोट बैंक बढ़ाने के लिए मेहनत करनी होगी। राहुल ने वायनाड सीट के बजाए रायबरेली को इसलिए तवज्जो दी है कि वह उत्तरप्रदेश में कांग्रेस का विस्तार कर सकें। ऐसा करने पर उन्हें अपने गठबंधन के सहयोगी सपा के अखिलेश से भी चुनौती मिलेगी और ऐसी ही चुनौती बिहार में राजद के तेजप्रताप यादव से। एक ओर केंद्र में उन्हें अपने सहयोगी को साथ में लेकर सरकार से टकराना है, वही राज्यों में अपनी ताकत भी बढ़ाना है। इस कार्य में उन्हें कड़ी चुनौती मिलने वाली है और इसमें उन्हें अपने राजनीतिक कौशल का प्रदर्शन करना होगा। इस चुनाव में कांग्रेस को मुस्लिम और दलित मतदाताओं का साथ मिला। अब उन्हें नाराज किए बिना उन्हें अगड़ी जातियों जैसे ब्राह्मण वोट बैंक में सेंध लगाना होगी। वह हर बार जनता के भरोसे चुनाव में अपनी सीटें नहीं बढ़ा सकती है।

नेपाल में (अ) पवित्र गठबंधन

प्रो. श्याम सुंदर भाटिया

पड़ोसी मुल्क नेपाल में सियासी लुका-छिपी का खेल बरसों-बरस से जारी है। हिमालयी राष्ट्र के लोकतंत्र का दुर्भाग्य यह है, शटल कॉक की मानिंद सियासत अस्थिर है। इधर सोलह वर्षों का सियासी लेखा-जोखा टटोला जाए तो नेपाल में पुष्प कमल दहल प्रचंड की अल्पमत सरकार को हटाकर शेर बहादुर देउबा और केपी शर्मा ओली का नया गठबंधन अब सत्तारूढ़ होने की तैयारी में है। प्रचंड सरकार मे शामिल सीपीएन-यूएमएल के आठ मंत्रियों ने इस्तीफा देकर अपनी मंशा साफ कर दी है, वे अब इस सरकार का संवैधानिक हिस्सा नहीं हैं। इससे पूर्व नेपाली कांग्रेस के मुखिया शेर बहादुर देउबा और सीपीएन-यूएमएल के सुप्रीमो केपी शर्मा ओली ने मिलकर नेपाल में बारी-बारी से सरकार बनाने का फैसला लिया है। ओली गुट के वजीरों के सामूहिक त्यागपत्र के बाद नेपाल में 2022 से काबिज प्रचंड की सरकार अलविदा होने की स्थिति में है। नेपाल में नया गठबंधन कब काबिज होगा, भारत समेत पूरी दुनिया की नज़र इस पर रहेगी। यह राजनीतिक बदलाव चंद घंटों या चंद दिनों में संभव है, क्योंकि प्रधानमंत्री प्रचंड का साफ कहना है, वह इस्तीफा नहीं देंगे, जबकि प्रचंड गुट के मुताबिक प्रचंड सरकार विश्वास मत का सामना करेगी। नेपाली संवैधानिक प्रावधानों के अनुसार, नेपाली संसद में बहुमत होने वाले प्रधानमंत्री को 30 दिनों के भीतर बहुमत सिद्ध करना होता है।

नेपाल में नया गठबंधन कब काबिज होगा, भारत समेत पूरी दुनिया की नज़र इस पर रहेगी। यह राजनीतिक बदलाव चंद घंटों या चंद दिनों में संभव है, क्योंकि प्रधानमंत्री प्रचंड का साफ कहना है, वह इस्तीफा नहीं देंगे, जबकि प्रचंड गुट के मुताबिक प्रचंड सरकार विश्वास मत का सामना करेगी। नेपाली संवैधानिक प्रावधानों के अनुसार, नेपाली संसद में बहुमत होने वाले प्रधानमंत्री को 30 दिनों के भीतर बहुमत सिद्ध करना होता है।

नेपाली संविधान के अनुच्छेद 76(2) के अनुसार तत्कालीन राष्ट्रपति बिद्या देवी भंडारी ने 25 दिसंबर 2022 को सीपीएन-मायोवादी सेंटर के मुखिया पुष्प कमल दहल प्रचंड को प्रधानमंत्री नियुक्त किया। प्रचंड ने 26 दिसंबर को नेपाल के प्रधानमंत्री पद की शपथ ली थी। यह महज संयोग था या इसके भी कुछ सियासी मायने हैं, यह सियासी टीकाकारों के मूल्यांकन का विषय है। इस दिन आधुनिक चीन के संस्थापक माओत्से तुंग की 130वीं जयंती थी। चीन ने प्रचंड के प्रधानमंत्री बनने पर सबसे पहले न केवल खुशी का इजहार किया, बल्कि लंबे समय से जारी सीमा विवाद को निपटाकर उन्हें रिटर्न गिफ्ट भी दे दिया। संसद में तीसरी सबसे बड़ी पार्टी के नेता के तौर पर उभरे प्रचंड को इस पद पर गंभीर दावेदार नहीं माना जा रहा था। इस चुनाव में नेपाली कांग्रेस 89 सीटों पर कब्जा करके सबसे बड़ी पार्टी बन गई। नेपाल में 276 सीटों वाले सदन में बहुमत के लिए 138 सीटें हासिल करना अनिवार्य है। सीपीएन-यूएमएल के खाते में 78 सीटें आईं, जबकि प्रचंड की पार्टी को महज 32 सीटों पर ही सफलता मिली। केवल 32 सीट जीतने के बावजूद प्रचंड गठबंधन सरकार में प्रधानमंत्री के पद पर काबिज हो गए। प्रचंड को नेपाल के सबसे बड़े विजयी दल- नेपाली कांग्रेस का साथ मिल गया। यह बेमेल गठबंधन अंततः 15 मार्च 2022 को टूट गया। सियासत के चतुर खिलाड़ी प्रचंड ओली की पार्टी के बूते सरकार बचाने में सफल रहे। करीब-करीब दो साल में यह तीसरी बार सत्ता परिवर्तन होने जा रहा है। काठमांडू पोस्ट के मुताबिक नई सरकार में डेढ़ साल तक केपी शर्मा ओली पीएम बनेंगे, जबकि बचे हुए कार्यकाल पर शेर बहादुर देउबा प्रधानमंत्री बनेंगे। पेंडुलम की मानिंद नेपाली सियासी दंगल में हार न मानने वाले प्रधानमंत्री प्रचंड अंत तक सरकार बचाने की जुगत में रहे। उन्होंने इस सियासी संक्रमण काल से उभरने के लिए पहली जुलाई को आपात बैठक बुलाई, लेकिन राजनीतिक हवा को भांपते हुए अंतिम क्षणों में इस बैठक को निरस्त कर दिया। अंततः गठबंधन सरकार को बचाने की सारी कवायद विफल हो गई। इस्तीफा न देने पर अड़े हताश एवं निराश प्रचंड को नेपाली कांग्रेस के प्रवक्ता डॉ. प्रकाश शरण सलाह देते हैं, बदलते सियासी परिदृश्य के चलते अल्पमत में आई प्रचंड सरकार को खुद इस्तीफा देने की पहल करनी चाहिए, ताकि नेपाल में नए गठबंधन की सरकार स्थापित हो सके। नेपाल में यूं तो संसदीय लोकतंत्र का शंखनाद 1951 में हो गया था, लेकिन इसे नेपाली राजशाही ने 1960 और 2005 में निलंबित कर दिया। 2008 में धर्मनिरपेक्ष गणराज्य की स्थापना के साथ ही दुनिया की अंतिम राजशाही का अंत हो गया। 2015 में नया संविधान लागू हुआ तो नेपाल संघीय लोकतांत्रिक गणराज्य बन गया। यहां का संविधान बहुजातीय, बहुभाषी, बहुधार्मिक, बहुसांस्कृतिक विशेषताओं से लबरेज है। कहने को तो, नेपाल और भारत में रोटी-बेटी का संबंध है। सियासी भाषा में नेपाल को भारत का लघु भ्राता भी कहा जाता है, लेकिन नेपाल की आयु भारत से दो गुना से भी ज्यादा है। दस्तावेजों के मुताबिक नेपाल का आधिकारिक रूप से गठन 25 सितंबर 1768 में हुआ था। भारत के मानिंद नेपाल कभी भी उपनिवेशिक बंधन में नहीं रहा है, जबकि भारत का आधिकारिक गठन 15 अगस्त 1947 में हुआ। नेपाल भारत से 178 वर्ष, 10 महीने और 21 दिन बड़ा है।

किंग्स कॉलेज, लंदन में किंग्स इंडिया इंस्टीट्यूट के अंतरराष्ट्रीय संबंधों के प्रोफेसर एवं आब्जर्वर रिसर्च फाउंडेशन थिंक टैंक में उपाध्यक्ष (अध्ययन एवं विदेश नीति) हर्ष वी. पंत नेपाल में सियासी करवट पर कहते हैं, सीपीएन-यूएमएल और नेपाली कांग्रेस वैचारिक रूप से अलग हैं। मुझे नहीं लगता, ऐसी गठबंधन सरकार लंबे समय तक टिकाऊ होगी। इसमें कोई शक नहीं, यह विवशताओं का गठबंधन है। नेपाल की माली हालत को देखते हुए मध्यावधि चुनाव मुफीद नहीं रहेगा। अच्छा रहेगा, यह गठबंधन कार्यकाल मुकम्मल करे। नए गठबंधन के सामने दो पड़ोसी देश-चीन के बीच संबंधों को संतुलित रखना एक बड़ी चुनौती होगी।

भारतीय कूटनीतिक नजरिए से कितना अहम् है ब्रिटेन का सत्ता परिवर्तन

डॉ. रमेश ठाकुर

ब्रिटेन में बेशक कड़ाके की ठंड पड़ रही हो, लेकिन आम चुनाव के परिणाम ने अचानक मौसम को गरमा दिया है। वहां राजनीति इतिहास का नया पन्ना लिखा जाएगा, क्योंकि सियासत की नई सुबह का आगाज हुआ है। चुनाव का ऐसा रिजल्ट, जिसकी कल्पना तक किसी ने नहीं की थी। सत्ता पक्ष और विपक्ष दोनों ने भी नहीं सोचा होगा। ब्रिटेनवासियों ने एकतरफा फैसला विपक्ष के हक में सुना डाला। चुनाव में विजय हासिल करने वाली लेबर पार्टी ने ब्रिटेन के सियासी इतिहास में पूर्व में जीत के सभी रिकॉर्ड तोड़ डाले। रिजल्ट देखकर पार्टी प्रमुख कीर स्टार्मर फूले नहीं समा रहे। समाना चाहिए भी नहीं। आखिर उनका सपना जो सच हो रहा है। प्रधानमंत्री का ताज उनके सिर पर सजेगा। ब्रिटेन की नेशनल असेंबली में अभी तक वह नेता विपक्ष की भूमिका में थे। विपक्ष के तौर पर उन्होंने जो जनकल्याणी मुद्दे कुरेदे। उनको देशवासियों ने पसंद किया। चुनावी समर में उन्होंने जनता से जो जमीनी वादे किए, उन्हें देश के मतदाताओं ने सिर आंखों पर उठाया। जनता ने आंख मूंदकर विश्वास किया। फिलहाल उन सभी वादों को पूरा करने की जिम्मेदारी अब नए सरताज के कंधों पर है। चुनौतियां हजार हैं, लेकिन उन्हें खुद पर उम्मीद है कि चुनौतियों का सामना कर लेंगे।

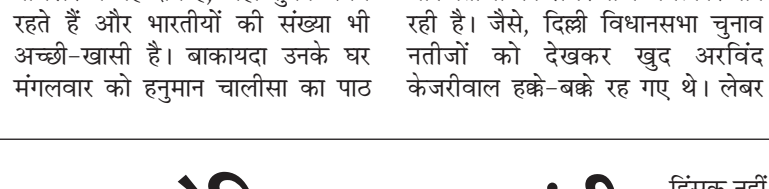

भारत के लिहाज से ऋषि सुनक की हार अच्छी नहीं है, क्योंकि प्रधानमंत्री रहते उनका मंदिरों में जाना, पूजा-अर्चना करना, हिंदू-हिंदुत्व की बातें करना, ये सब सनातनी प्रचार का हिस्सा माना जाता था। शायद ऐसा करना उनके लिए नुकसानदायक साबित हुआ हो। ब्रिटेन में बड़ी संख्या में भारतीय मूल के लोग रहते हैं। अफसोस इस बात का है कि उन्होंने भी ऋषि सुनक से किनारा कर लेबर पार्टी को वोट किया। भारतीयों ने ऋषि सुनक को क्यों नकारा इसकी समीक्षा लंदन से लेकर भारत में खूब हो रही है। प्रधानमंत्री ऋषि सुनक बेशक अपनी संसदीय नॉर्थलेरटन सीट से जीते हों। पर, बहुत कम अंतर से? उनकी समूची पार्टी बुरी तरह से हारी है। विपक्ष की ऐसी सुनामी जिसमें मानो सत्तापक्ष असहाय होकर बह गया हो। ऋषि सुनक भी मात्र 23,059 वोटों से ही जीते हैं। वरना, शुरुआती रुझानों में उनकी भी हालत पतली थी। दो राउंड तक पीछे रहे।

ताज्जुब वाली बात ये है कि नॉर्थलेरटन वह क्षेत्र है, जहां सुनक स्वयं रहते हैं और भारतीयों की संख्या भी अच्छी-खासी है। बाकायदा उनके घर मंगलवार को हनुमान चालीसा का पाठ होता है, लोग शामिल होते हैं। इसके अलावा भारतीय तीज-त्यौहारों पर लोगों को जुटना होता हैं। ऐसे मौकों पर तरह-तरह के भारतीय व्यंजन पकते हैं। पर वो लोग और समर्थक भी उनसे छिटक गए। ऋषि के ज्यादातर मंत्री और पार्टी के वरिष्ठ प्रमुख नेता भी चुनाव में चित हो गए। कइयों की तो जमानत भी जब्त हुई हैं। ब्रिटेन और भारत के मौजूदा चुनाव ने एक बात यह बता दी है कि मतदाताओं के मिजाज को पढ़ना अब आसान नहीं। कोई नेता या दल इस मुगालते में न रहे कि फला समुदाय या मतदाता उनका है।

बहरहाल, ब्रिटेन में चुनाव नतीजे एग्जिट पोल के मुताबिक ही रहे। कुल सीटें 650 हैं जिनमें एग्जिट पोल में लेबर पार्टी को 410 सीट मिलने का अनुमान था। नतीजों को लेबर पार्टी चमत्कार मान रही है। जैसे, दिल्ली विधानसभा चुनाव नतीजों को देखकर खुद अरविंद केजरीवाल हक्के-बक्के रह गए थे। लेबर पार्टी ने 650 सीटों में से 400 पार के साथ 14 साल बाद प्रचंड वापसी की है। ब्रिटेन में चार जुलाई को आम चुनाव हुए थे। चुनावी मुद्दे कुछ ऐसे थे, जिनमें ऋषि सुनक घिर गए थे। दो प्रमुख मसले जिसमें पहला कोरोना में व्यवस्थाओं का चरमराना, वहीं दूसरा देश की अर्थव्यवस्था का ग्राफ नीचे खिसक जाना। इन दोनों मुद्दों को लेबर पार्टी ने अपना चुनावी कैंपेन बनाया था। भारत के साथ मित्रता और देशवासियों के हितों की अनदेखी करने का मुद्दा भी चुनाव में खूब उछला।

ब्रिटेन की नई हुकूमत के साथ हमारे संबंध कैसे होंगे? इस सवाल के अलावा बड़ा सवाल यह भी है कि आखिर भारतीयों का सुनक के प्रति मोहभंग हुआ क्यों? ऋषि के भारतीय मूल के होने पर प्रवासी भारतीयों को उन पर गर्व होता था। पर, जब वोटिंग का समय आया, तो ऐसा प्रतीत हुआ कि भारतीयों ने इमोशनल एंगल की जगह बदलने के लिए मतदान किया। दरअसल इसे कंजर्वेटिव पार्टी के नेतृत्व वाली सरकार के 14 साल के शासन से उपजी निराशा मानी जा रही है। वैसे, दिल पर लेने की जरूरत इसलिए भी नहीं है, राजनीति में हार-जीत कोई बड़ी बात नहीं। बदलाव होते रहते हैं और होने भी चाहिए। किसी एक व्यक्ति या दल के पास सत्ता की चाबी ज्यादा समय तक जनता रखना भी नहीं चाहती। हमारे यहां संपन्न लोकसभा चुनाव में भी दुनिया ने चमत्कारी बदलाव देखें। हालांकि, प्रधानमंत्री ऋषि सुनक ने हार स्वीकार करते हुए लंदन वासियों से माफी मांगते हुए लेबर पार्टी के नेता कीर स्टार्मर को दिल खोलकर बधाई दी है। राजनीतिक लोगों में ऐसे नैतिकता हमेशा रहनी चाहिए।

लेकिन राहुल गांधी ने मर्यादा तोड़ दी

हृदय नारायण दीक्षित

लोकसभा में प्रतिपक्ष के नेता राहुल गांधी ने हिन्दुओं को हिंसक कहा है। इस वक्तव्य पर अखिल भारतीय प्रतिक्रिया हो रही है। नेता प्रतिपक्ष से सदन की मर्यादा और अतिरिक्त शालीन व्यवहार की अपेक्षा रहती है। लेकिन राहुल ने मर्यादा तोड़ दी। वे प्रधानमंत्री को संसदीय परंपरा के अनुसार माननीय नहीं कहते। वे उन्हें 'नरेंदर मोदी' कहते हैं। वे संभवतः यह बात भी नहीं जानते कि संसदीय व्यवस्था में नेता प्रतिपक्ष का पद बेहद सम्माननीय होता है। ब्रिटिश संसदीय परम्परा में वह 'गवर्नमेन्ट इन वेटिंग' कहा जाता है। कमाल है कि वे भारतीय उपमहाद्वीप के अभिजनों की विश्ववरेण्य हिन्दू संस्कृति से अपरिचित हैं। हिन्दू उन्हें हिंसक दिखाई पड़ते हैं। हिन्दू समाज व्यवस्था का मूलभूत तत्व लोककल्याण है। हिन्दू भारत की प्रकृति और संस्कृति के संवाहक हैं। यह भारत के लोगों की जीवनशैली है। हिन्दू जीवनशैली में सभी विश्वासों के प्रति आदर भाव है।

हिन्दुत्व समग्र दार्शनिक अनुभूति है। लेकिन भारतीय राजनीति के आख्यान में हिन्दू तत्व के अनेक चेहरे हैं। उग्र हिन्दुत्व, साम्प्रदायिक हिन्दुत्व आदि अनेक विशेषण मूल हिन्दुत्व पर आक्रामक हैं। हिंसक हिन्दुत्व राहुल ने जोड़ा है। अंग्रेजी भाषान्तर में हिन्दुत्व को हिन्दुइज्म कहा जाता है। इज्म विचार होता है। विचार 'वाद' होता है। वाद का प्रतिवाद भी होता है। पूंजीवाद-कैप्टलिज्म है। समाजवाद सोशलिज्म है। इसी तरह कम्युनिज्म है। अंग्रेजी का हिन्दुइज्म भी हिन्दूवाद का अर्थ देता है। लेकिन हिन्दुत्व हिन्दूवाद नहीं है। हिन्दुत्व समग्र मानवीय अनुभूति है। आस्तिकता हिन्दू जीवन की मूल प्रकृति है। हिन्दू होना परिपूर्ण लोकतंत्री होना है। हिन्दू सभी विचारों का आदर करते हैं।

हिन्दू धर्म वैदिक धर्म का विकास है। हिन्दू होना भारतीय जीवन शैली है। इस्लाम और ईसाईयत पंथ हैं। वे भारत के बाहर विकसित हुए। भारत में उनका परिचय हिन्दू धर्म से हुआ। हिन्दुओं के लिए भी इस्लाम व ईसाईयत सर्वथा नए विश्वास थे। भारतीय जनता का एक हिस्सा इस्लाम व ईसाईयत को भी धर्म कहता है। लेकिन हिन्दू धर्म ईसाईयत या इस्लामी पंथिक विश्वास जैसा नहीं है। ईसाईयत और इस्लाम में एक ईश्वर, एक देवदूत या पैगम्बर और एक पवित्र पुस्तक के प्रति विश्वास की धारणा है। हिन्दू धर्म किसी एक पवित्र पुस्तक या देवदूत से बंधा नहीं है। कुछ विद्वान भारत में सभी धर्मों में समन्वय की बातें करते हैं। वे इस्लाम और ईसाईयत को भी धर्म कहते हैं। सच यह नहीं है। पंथ, मत, मजहब और रिलीजन अनेक हैं। धर्म एक है। इसे सनातन धर्म भी कहते हैं। इसे वैदिक धर्म भी कहते हैं। भारत में धर्म और धार्मिक विकास की यात्रा मजेदार है। यहां दर्शन और वैज्ञानिक विवेक का जन्म पहले हुआ और धर्म संहिता का विकास बाद में। जिज्ञासा और प्रश्नाकुलता हिन्दू दर्शन की विशेषता है। यहां साधारण हिन्दू भी आस्था पर प्रश्न करते हैं और संवाद भी। प्रश्नाकुलता और उदारता हिन्दू समाज की बड़ी पूंजी है। सबके प्रति बंधुभाव हिन्दू की प्रकृति है। ऐसा उदार हिन्दू समाज हिंसक नहीं हो सकता। हिन्दू विचार में प्रकृति शाश्वत है। प्राकृतिक नियम शाश्वत होते हैं। प्रकृति सुंदर है। आनंदरस से भरी पूरी है। यह सत्य है। शिव है। कल्याणकारी है। इसी शिव और सुंदर का संवर्द्धन हम सबका कर्तव्य है। यह प्रतिपल सृजनशील है। नया आता है। अरुण होता है। तरुण होता है। गृह नक्षत्र सुनिश्चित नियम में गतिशील रहते हैं। प्रकृति के गोचर प्रपंचों में हिंसा नहीं है। वैदिक पूर्वजों ने प्रकृति के संविधान को 'ऋत' कहा है। ऋत् वैज्ञानिक अनुभूति है और हिन्दू प्रतीति है। हिन्दू दृष्टि में प्रकृति की शक्तियां उपास्य हैं। इन्द्र, अग्नि, पृथ्वी, पर्जन्य, मरुत, रूद्र आदि अनेक वैदिक देवता हैं। वरुण देवता प्राकृतिक नियमों के संरक्षक-ऋताव हैं। हिन्दू विश्वास में देवता भी नियम पालन करते हैं। मरुत वायुदेव भी नियमानुसार गतिशील ऋतजाता हैं (ऋ03-15-11)। हिन्दू आस्तिकता में किसी भी शक्तिशाली मनुष्य या देवता को नियम पालन न करने की छूट नहीं है। ऋत् के संरक्षक शक्तिशाली वरुण को भी नहीं।

ऋग्वेद के अनुसार धरती और आकाश वरुण के नियम से धारण किए गए हैं-वरुणस्य धर्मणा (6-70-1)। ऐसे अनुभवजन्य विश्वास में हिंसा की जगह नहीं है। प्राकृतिक नियमों का धारण करना धर्म है। बताते हैं कि शक्तिशाली वरुण ने सूर्य का मार्ग निर्धारित किया है। यह है ऋतु नियम। सूर्य ने यह नियम पालन किया। यह हुआ सूर्य का धर्म। वैदिक काल के बाद ऋत् और धर्म एक ही अर्थ में कहे जाने लगे। ऋत् मार्गदर्शी है। इसके अनुसार कर्म करना धर्म है। धर्मानुसार कर्म में हिंसा नहीं। विष्णु बड़े देवता हैं। उन्होंने तीन पग चलके पूरी धरती नाप ली। ऋग्वेद के अनुसार वे धर्म धारण करते हुए तीन पग चले।